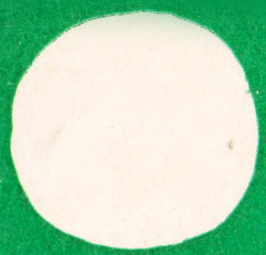


बोसकी का पंचतंत्र

गुलज़ार



बोसकी का पंचतंत्र



बोसकी का पंचतंत्र

गुलज़ार

राधाकृष्ण

BOSKY KA PANCHATANTRA
by
GULZAR

1978

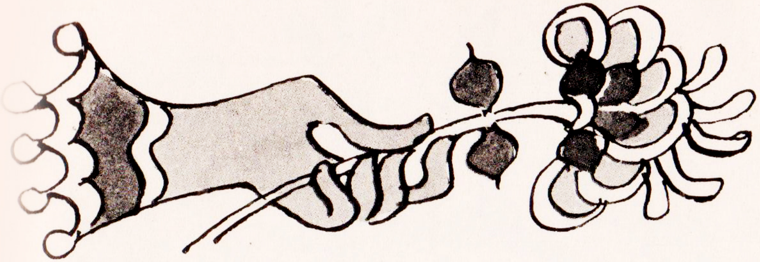
तरतीब :
भूषण बनमाली

सज्जा :
अनिल व्यास

मूल्य : 8 रुपये

प्रकाशक
राधाकृष्ण प्रकाशन
2 अंसारी रोड, दरियागंज,
नई दिल्ली-110002

मुद्रक
भारती प्रिंटर्स
के-16, नवीन शाहदरा,
दिल्ली-110032



मेघना गुलज़ार के नाम
उसके पाँचवे जन्म दिन पर



क्रम

और बेचारा
राजा था ना
माथा पीट के रह जाता था
सोचता था, बस, उसके बाद
राजपाट होगा बरबाद ।

एक दिन इक पंडित आया
विष्णु शर्मा नाम बताया
बोला, 'ऐ शक्ति-महाराज,
ब्राह्मण हूँ पर काम न काज,
क्या कोई सेवा कर सकता हूँ ?'

राजा बोला, 'भिक्षा ले लो ।'
ब्राह्मण बोला, 'शिक्षा ले लो ।'





'मतलब ?' राजा चौंक के बोला।
ब्राह्मण हँस के धीरे से बोला,
'मुफ़्त नहीं कुछ लेता मैं
पूँजी मेरे पास बहुत है
पर वह पूँजी खा नहीं सकता
सबकी सेवा कर सकता हूँ
अपनी सेवा पा नहीं सकता।

मेरे पास इक चूरन है
जितना है सम्पूरन है
बाँटते जाओ तो बढ़ता है
पड़े-पड़े वह घटता है!'

राजा ने हैरत से देखा
ब्राह्मण कुछ अजीब है यह



कहता है धनवान हूँ मैं
लगता बड़ा ग़रीब है यह
सोच के राजा ने फिर पूछा :

‘बोलो ब्राह्मण, क्या चाहते हो?
हमसे कुछ लेना है तुमको
या हमको देना चाहते हो?’

ब्राह्मण बोला : ‘कल जंगल में
एक अजब घटना देखी थी
घोड़ों पे चढ़के तीन जवान
तालाब किनारे आये थे
कपड़े तो उतारे तीनों ने
और तीनों ख़ूब नहाये थे
पानी में नहीं उतरा कोई

परछाईं का तन ही मलते रहे
और आग जला के दूर ज़रा
ठंडे पानी से डरते रहे ।

फिर तीनों बोले आपस में
अब कैसे पोंछें गीले बदन ?

इक बोला–पत्तों से पोंछो ।
इक बोला–मिट्टी मल लेते हैं ।
तीजा बोला–धूप में बैठो
धूप में कपड़े सूखते हैं ना !

और गीले बदन सुखाने को
तीनों जा धूप में लेटे थे
वह तीनों आपके बेटे थे ।'



राजा ने माथा पीट लिया
शर्मिंदा हुआ।

ब्राह्मण बोला :
'मुझे आपके पुत्र की चिंता नहीं
कल के राजा की चिंता है।'

राजा ने उठ के पाँव लिये
और ब्राह्मण से इतना ही कहा :
'विद्या का चूरन चख लेंगे
तो वह भी अमर हो जायेंगे
उन्हें अपनी शरण में लो महाराज
वह 'राजकुँवर' हो जायेंगे।'





तीनों शहज़ादों को लेकर
ब्राह्मण जंगल में लौट आया।

हर रोज़ कहानी कहता था
और बात नई समझाता था।

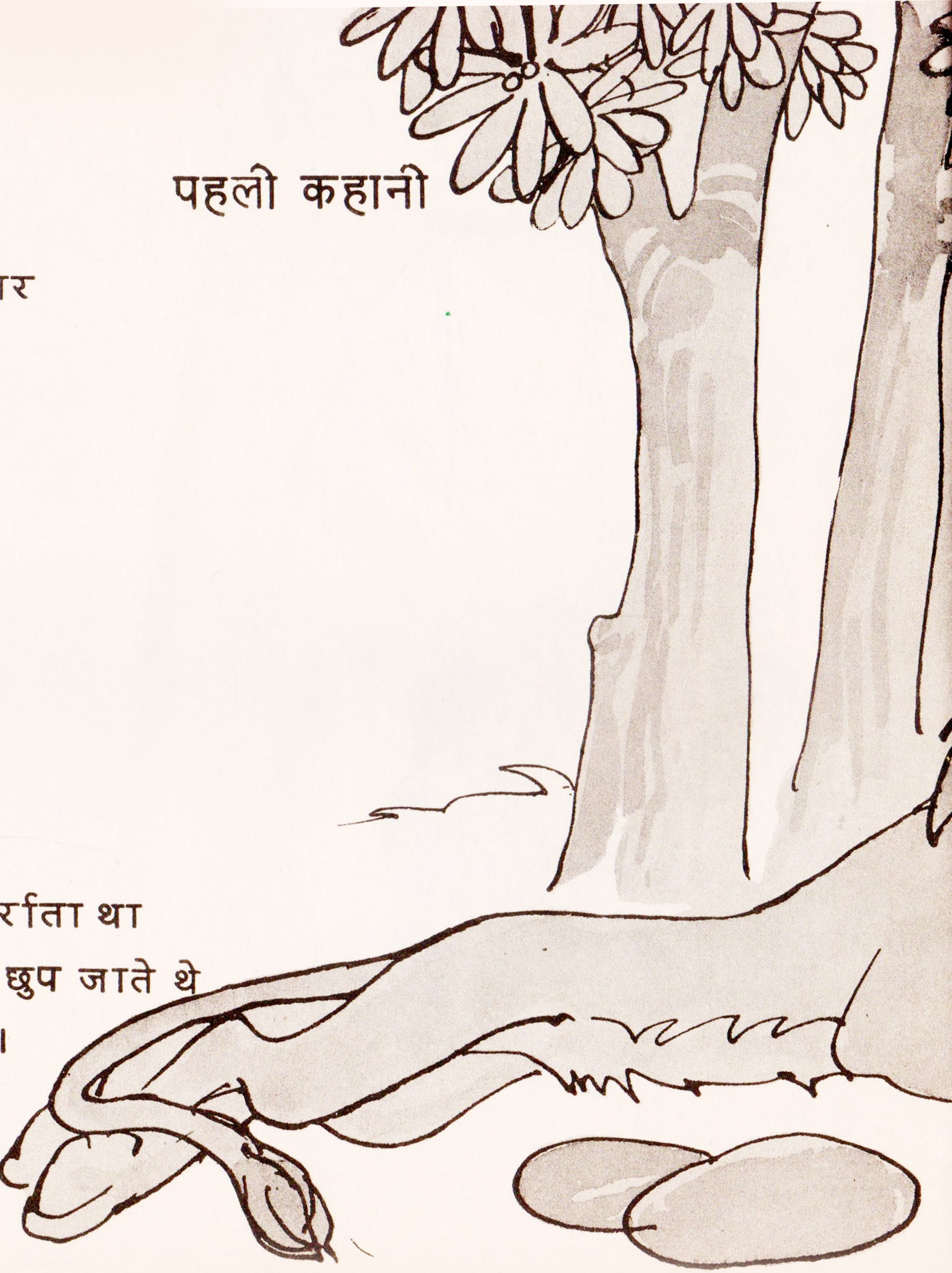
कुछ ऐसे पाँच किताबों में
नीति के पाँच हिसाबों में

इक पंचतंत्र आरम्भ हुआ :

पहली कहानी

बहुत ही बड़े एक जंगल में इक बार
बहुत ही बड़ा एक ही शेर था
बहुत ही बड़ी उसकी मूँछें भी थीं
बहुत ही बड़ी पूँछ उस शेर की।

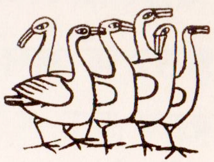
कभी पूँछ ऊपर उठाता था जब
तो पंछी भी पेड़ों पे डर जाते थे
निकलता था जब ग़ार से और ग़ुर्राता था
तो जंगल के सब जानवर डर के छुप जाते थे
बहुत सहमे-सहमे-से रहते थे सब।



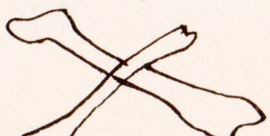




कभी कोई गीदड़, कभी लोमड़ी
कभी नील गाय, कभी कोई सूअर
कभी एक-दो
कभी तीन-तीन
जहाँ भी मिले जिस क़दर भी शिकार
वह जंगल का राजा था खा जाता था
कोई भी अमन से न जी पाता था।



बहुत सोचकर सब-के-सब एक दिन
सभा में मिले
किये फ़ैसले :



–अगर शेर बाहर न आया करे
तो हर रोज़ परची निकाला करें
कि हर रोज़ बस एक ही जानवर
ख़ुद ही शेर की ग़ार में भेजकर
चैन से जी सकें।

'मगर शेर जी से यह कैसे कहें ?'
सभा के सभी सोच में पड़ गये।
बहुत देर बाद :
बड़े पीर बकरे जी बोले कि "मैं"

'मेरी उम्र तो यूँ ही बाक़ी है कम
मुझे खाए जाता है बच्चों का ग़म
अगर शेर ने खा लिया भी तो क्या ?'





सुनाया बड़े पीर ने जाके जंगल का यह फ़ैसला
-शेर जी सुन के पहले तो चौंके ज़रा
मगर ग़ौर से सोचा जब मामला
तो समझे, चलो अपनी मेहनत बची
यह जंगल भी अपना है, राजा भी हम
हमें ही तो होगा ना परजा का ग़म ।

ज़बाँ फेर कर ख़ुश्क होंठों पे बोले :
'ख़बर कर दी जायेगी जनता को कल
हमें अपनी जनता का यह फ़ैसला दिल से मंज़ूर है
मगर आज के दिन
हलूम—'
डकार आ गयी शेर जी को ज़रा
'—मगर आज के दिन—
हलूम हलूम—

आज तो आप ही मेरी ख़ूराक हो।'
कहा और बस खा गया बूढ़े बकरे को शेर।



दिन गुज़रते गये
लोग घटते गये
महीने गये
यूँ ही रोज़ ख़ूराक जाती रही शेर की ग़ार तक
कि इक दिन
निकल आयी बारी जो ख़रगोश की
वह घबरा गया।

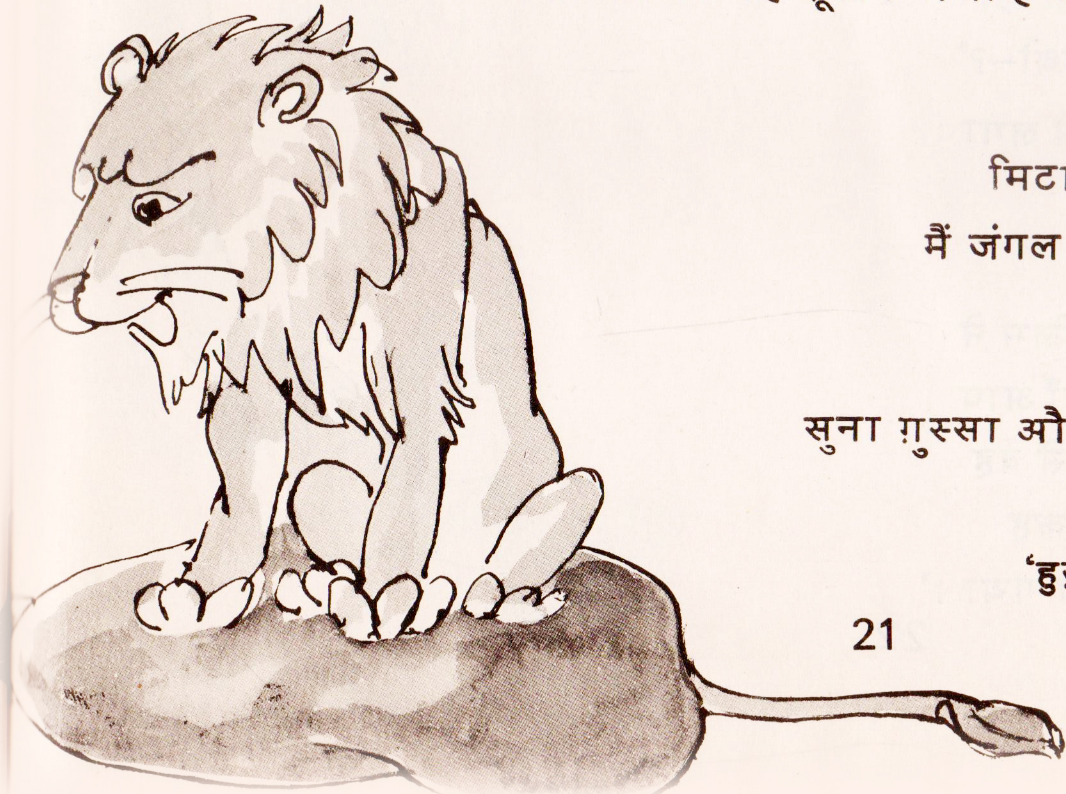




चला धीमे-धीमे से कछुए की चाल
पहुँचते-पहुँचते उसे ग़ार तक शाम होने लगी ।

उसे देखकर शेर भन्ना गया :
'छटंकी बराबर यह ख़ूराक भेजी है जंगल ने और इस क़दर देर से !

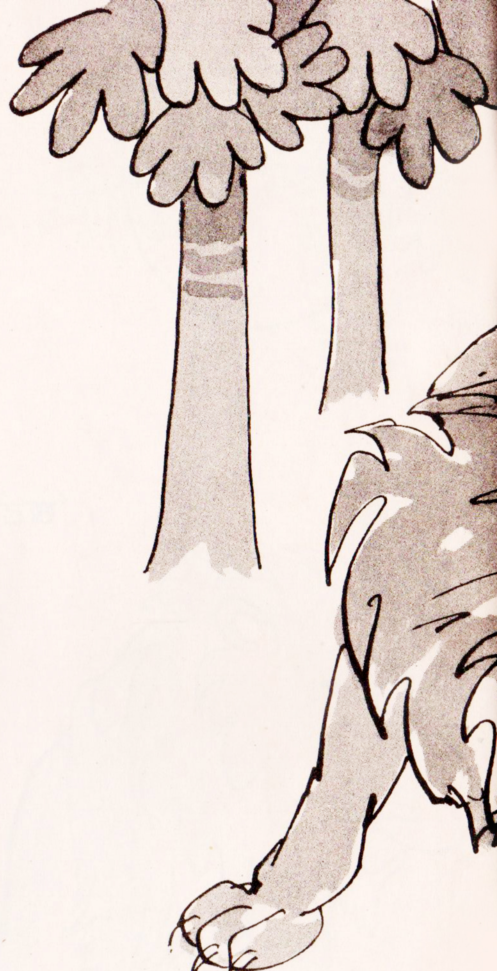
मिटा दूँगा ख़रगोश की जात को
मैं जंगल का जंगल ही खा जाऊँगा ।'

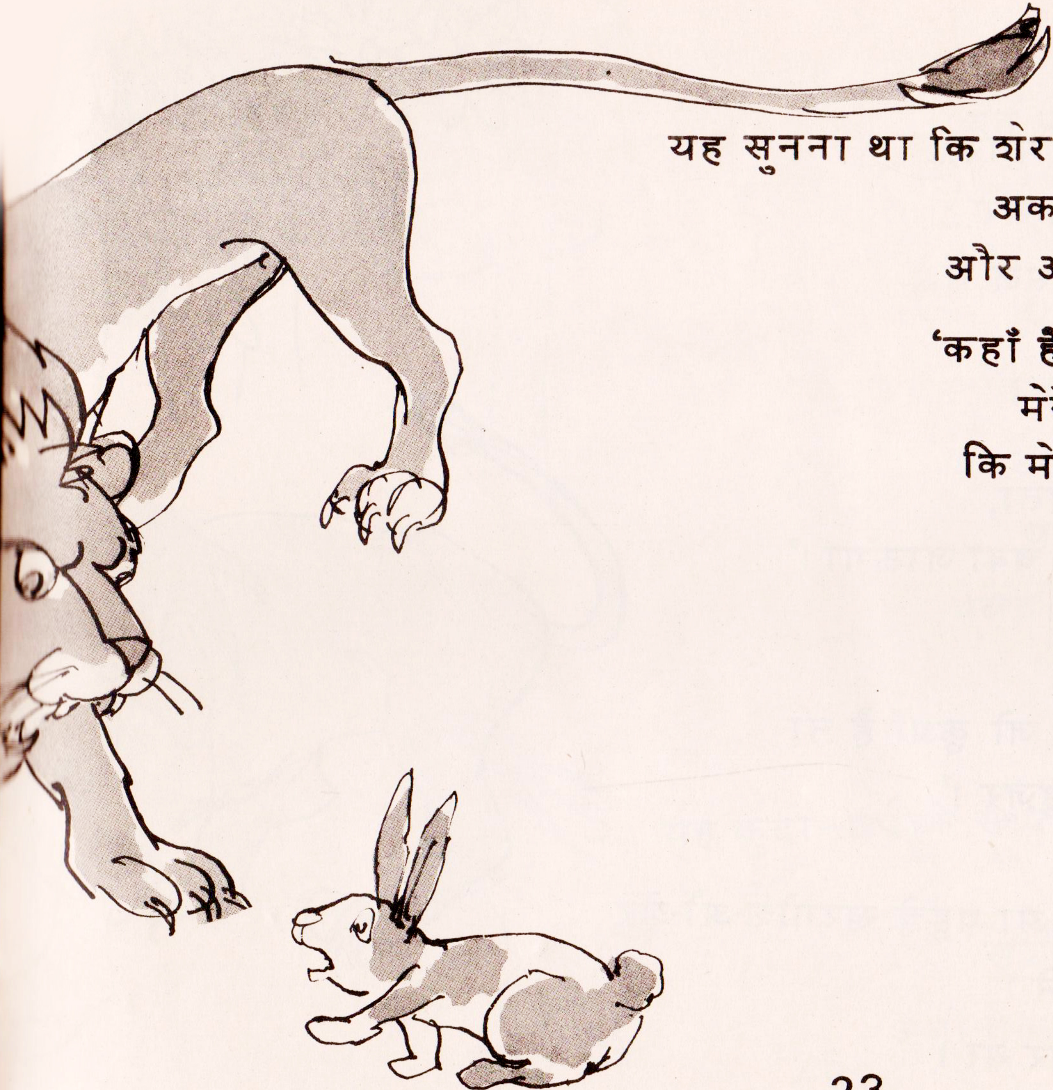


सुना ग़ुस्सा और सुन के ख़रगोश रोने लगा
गिड़गिड़ाने लगा :
'हुज़ूर, इसमें मेरी नहीं है ख़ता

न जंगल-सभा का कोई दोष है
कि जंगल ने तो सात ख़रगोश भेजे मगर...'
'मगर क्या ?'
'म...मगर सर...।'
'मगर क्या ? क्यों हकला रहे हो, बताओ मुझे ?'
'म...मम—मगर सर...।'
'कहाँ हैं तुम्हारे छः ग़द्दार साथी—?'
वह ख़रगोश फिर से सिसकने लगा :

'हमें रास्ते में...हुज़ूर एक ज़ालिम ने
रोका था और...बहुत गालियाँ आप
को दीं, कहा...मैं दोहराऊँ कैसे वह
सब-कुछ हुज़ूर...कहा, जाओ कह
दो...मेरे साथियों को वही खा गया ।'





यह सुनना था कि शेर ग़ुर्राया, मूँछों में बल आ गये
अकड़ने लगी उसकी हंटर-सी पूँछ
और आँखों में बस ख़ूँ उतरने लगा :

'कहाँ है, किधर है, वह कौन है बता ?
मेरे होते किसका हुआ हौसला ?
कि मेरी रियाया पे ज़ुल्म कर सके !'



'वह है आपकी जात से सर...मगर...
मैं...म...मैं...मैं...वह कहता था सर...
ज...ज...जंगल का राजा...असल में...
वह...वह है—।'

लपक के उठा शेर, बोला, 'बता,
कहाँ है बता, उसको कच्चा चबा जाऊँगा।'

'वह पीपल की पौड़ी के पीछे जो कुआँ है ना
वहीं पे छुपा है वह कायर, हुज़ूर !'

पलक के झपकने में कुएँ पे आ पहुँचे ख़रगोश-औ-शेर
खड़े हो के कुएँ पे उस शेर ने
जो पानी में देखा तो हाँ—शेर था।





वह पानी में उसकी ही परछाईं थी
मगर शेर समझा
वही दूसरा शेर है।

दिखाये जो इसने भयानक-से दाँत
तो उसने भी दिखलाये वैसे ही दाँत
यह ग़ुर्राया, ग़ुर्राई परछाईं भी
पलट कर जो कुएँ से आवाज़ लौटी



यह समझा—वह आया—
यह कूदा—छपाके से पानी में और डूब के मर गया।

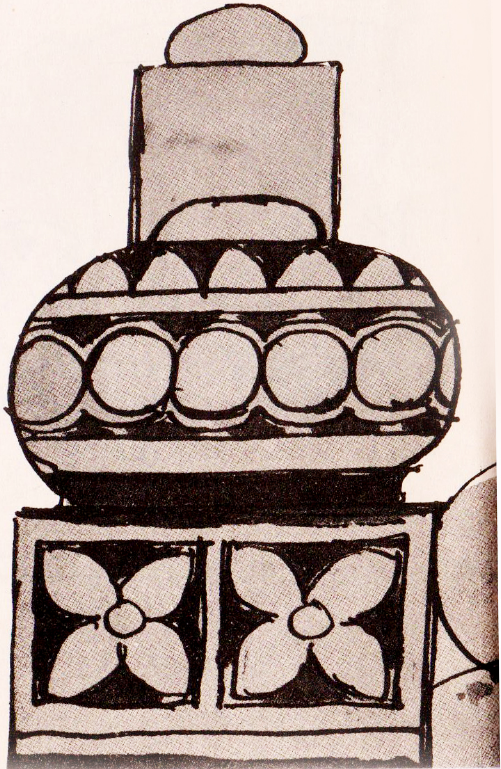
ख़ुशी से जो उछला है ख़रगोश तो
अभी तक उछल कर ही चलता है वह।

दूसरी कहानी

इक महिलापुरम् का राजा था
उस राजा का इक बिस्तर था
उस बिस्तर पे नारंगी रंग की चादर थी
उस रेशमी चादर के नीचे
फूलों से कढ़ा इक गद्दा था
गद्दे के तले पाये थे जहाँ
खटमलों की फ़ैमिली रहती थी ।

इक नानी थी, परनानी थी, और दादा, दादी, परदादी ।

नाना इक दुर्घटना में
राजा की एड़ी पे चढ़ते हुए
झटके से गिरे और कुचले गये,

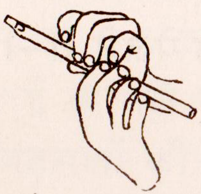


वह बहुत बड़ा कुनबा था वहाँ
और बरसों ही से रहता था
चाचा, चाची, ख़ालू, ख़ाला,
बापू, बेटी, उसकी बेटी
उस बेटी के बेटे-बेटी—
राजा के लहू पे पलते थे
डंड पेलते थे—।





इक रोज़ महक पाकर मच्छर
खिड़की से चला आया अन्दर
और कान पे आ के राजा के
कुछ गाने लगा, मँडराने लगा
आवारा लफंगों की मानिंद
होंठों से सीटी बजाने लगा ।



लपकीं जो बड़ी बी बाहर को
मझली भी ऊपर दौड़ आयी
धमकाया बड़ी बी ने उसको :
‘है राजमहल, बाज़ार नहीं ।’
और मार के पाँव उसेबोली
‘चल बाहर जा, जा मर बदज़ात !’



मझली शर्मीली ने हँस कर
देखा तो मच्छर फिसल गये
बड़बी के पाँव थाम लिये
और उनकी ख़ूब ख़ुशामद की :
'पेशे से दोनों एक हैं हम
और एक तरह ही जीते हैं
रंग-रूप में थोड़ा फर्क़ सही
पर ख़ून तो दोनों पीते हैं।



हम आज तुम्हारे मेहमाँ हैं
मेहमान का इतना दिल रख लो
कह दो कि ख़ून तो पीते हो
यह शाही ख़ून ज़रा चख लो।'

बड़बी का दिल कुछ मोम हुआ
मच्छर को इतनी इजाज़त दी :
'बस आज की रात है, रह जाओ
और देखो, शोर न हो कोई
जब प्यास लगे आदाब के साथ
जाना राजा के पाँव तलक
और उससे ऊपर उठना नहीं!'



यह कह के बड़ी बी तो चल दी
और मच्छर फिर मंडराने लगा
गुन-गुन, गुन-गुन गाने लगा।

इक बार जो ख़ून ज़बाँ पे लगा
तो ऐसा मज़ा आया है कि बस
बस मच्छर झूम के उड़ा और
राजा के गाल पे काट लिया।



धप मार के राजा जाग गया
फिर सारी बत्तियाँ जलवायीं
बुलवाये सब नौकर-चाकर
और कहा कि, 'बिस्तर साफ़ करो,
और देखो कौन है बिस्तर में
किस चीज़ ने मुझको काटा है ?'

बरसों के बसने वाले उन खटमलों की बस्ती पकड़ी गयी
सब मसल-मसल के मारे गये
चुन-चुन के सारे क़त्ल हुए ।

नादान-से इक मेहमाँ के लिए
इक पूरा क़बीला शहीद हुआ ।

तीसरी कहानी

दोस्त थे दो
इक 'झूठा' था
इक 'सच्चा' था
दो नाम यही थे दोनों के।

चालाक था वह जो झूठा था
और सच्चा भोला-भाला था



लौट रहे थे दोनों ही परदेस से ख़ूब कमाकर
रुपये-पैसे भरकर
अपना-अपना माल उठाकर।

जो झूठा था ना
उसके मन बेईमानी आयी
उसने सोचा : ऐसी इक तरकीब हो कोई

इसका जितना पैसा है ना
वह सारा भी मैं हथिया लूँ ।

चलते-चलते दोनों जब गाँव के पास आ पहुँचे तो—
झूठा बोला :

'सुन ऐ दोस्त !
इतना पैसा लेकर जब हम घर पहुँचेंगे
धूम मचेगी
दावत होगी
लोग सुनेंगे
शोहरत होगी
शोहरत सुनके आयेंगे डाकू
गाँव लूटेंगे
गोली चलेगी
लोग मरेंगे





मेरा बाप भी मर जायेगा
तेरी माँ को लगेगी गोली
जान भी जायेगी, पैसा भी
पैसा ही हर दुख की जड़ है !'

भोला-भाला वह बेचारा
आँख में आँसू भरके बोला :
'दोस्त, कोई तरकीब बताओ
जान भी बच जाये, पैसा भी।'

झूठे ने तरकीब बतायी :

'गाँव के बाहर बहुत पुराना बरगद का इक पेड़ है ना
उसके नीचे चलो दबा दें सारा पैसा
फिर जब जितनी पड़े ज़रूरत उतना आकर ले जायेंगे।'

भोला-भाला सच्चा हँस के मान गया
बरगद के नीचे इक गड्ढा ख़ोद के पैसा छोड़ गया।

रात की रात उस झूठे ने
फिर खोदा गड्ढा
सारा पैसा जमा किया
और गड्ढा भर के भाग गया।

दूसरे दिन ही पहुँचा फिर सच्चे के पास
रोनी-सी सूरत से बोला :

'बापू कुछ बीमार हैं कल से
घर में सख़्त जरूरत है
चल ना, बरगद से थोड़े-से पैसे ले लें।'





झूठा, बेचारे सच्चे को साथ लिये
बरगद के नीचे आया और गड्ढा खोदा
कुछ न पाकर—धाड़ से रोया—और चिल्लाया :

'मुझको दोस्त ने लूट लिया
लूट लिया, सच्चे ने मुझको लूट लिया।'

सारा गाँव जमा हुआ
पंचायत बैठी।

झूठे ने इलज़ाम लगाये :

'और किसी को पता नहीं था
बस इक सच्चा जानता था—
उस गड्ढे में कितना पैसा दफ़न किया है—
सच्चे ने ही लिया है पैसा!'

सच्चा बेचारा रोता था
क़समें खाता था—कहता था :

'मेरा भी तो गया है पैसा
मुझको कुछ मालूम नहीं !'

हैराँ थे पंचायत वाले
कैसे उनका फ़ैसला होगा ?

'ॐ हरि ॐ', कहते-कहते
पंडित जी उस तरफ से निकले
पूछा—'भाइयो, क्या झगड़ा है ?
क्यों जमा हो ?'



पंचायत के मुखिया ने सब कह सुनाया।

'– आप बताइए, पंडित जी, अब कैसे इसका फ़ैसला होगा ?'





पंडित जी कुछ सोच के और कुछ खाँस के बोले :

'बूढ़े बरगद ही से पूछो
उसने तो देखा ही होगा
वह ही सच बता देगा–।'

बात समझ में आ गयी सबके
अगले दिन का वक़्त मुक़र्रर करके सारे घर लौट आये।

झूठे को अब चिंता लग गयी
कल क्या होगा ?
बूढ़ा बरगद बोल पड़ा तो ?

रात को उठ के झूठा उस बरगद पे पहुँचा
देखा, अन्दर से वह बरगद खोखला था।





फिर से इक चालाकी सूझी—झूठा
छुप के बरगद के अन्दर ही बैठ गया।

अगले दिन जब आये सब पंचायत वाले
और बूढ़े बरगद से जब सरपंच ने पूछा :

'-बरगद बाबा तेरे चरणों में रखी थी
दो बच्चों ने पूंजी सारी
किसने उसकी चोरी की है ?
किसने की है यह मक्कारी ?'

मोटी-सी आवाज़ बनाकर
झूठा बोला अन्दर से :

'-जिस बच्चे का नाम है सच्चा
उस बच्चे ने चोरी की है !'

सबने मुड़ के देखा, सच्चा पास खड़ा था
ग़ुस्से में सच्चे ने बढ़ के आग लगा दी बरगद को
बोला : 'बरगद झूठा है !'

आग पकड़ ली फ़ौरन सूखे बरगद ने
फ़ौरन शोले भड़क उठे—

झूठा जलते-जलते कूदा,
अन्दर से चिल्लाया झूठा :

'दोस्त बचाओ—दोस्त बचा लो
मैंने ही वह चोरी की थी
मैंने झूठ कहा पंचों से
मेरे पास हैं सारे पैसे—।'





सबने मिलकर जल्दी-जल्दी पानी डाला
—आग बुझायी
बाहर लाये झूठे को।

बाहर आते-आते जल गये झूठे के दोनों ही पाँव।
कहते हैं ना :
—झूठ के पैर नहीं होते।

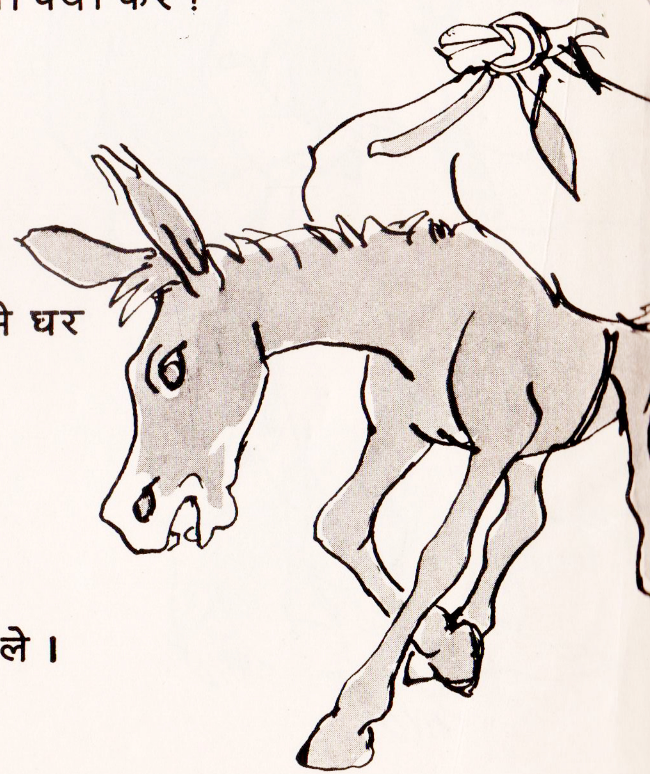
झूठे ने फिर माफी माँगी
सच्चे का लौटाया हिस्सा
आज भी दोहराते हैं लोग
'झूठे' और 'सच्चे' का किस्सा।

चौथी कहानी

गधा, उफ़ बड़ा ही गधा है !
कहा था कि खीरे के खेतों में घुसना तो गाना नहीं
मगर चाँदनी रात में दिल मचलने लगे तो बिचारा गधा क्या करे ?

वह धोबी है ना ? वह बिहारी—उसी का गधा है
बहुत बोझ उठाता है दिन-भर
मनों गंदे-मैले-कुचैले-से कपड़े कभी घाट से घर
कभी घर से फिर घाट तक ले के जाना ।
मजूरी बिचारा निभाता है पूरी !

थका-माँदा जब लौटता है तो मालिक
रहम खाके उसको खुला छोड़ देता है, चर ले चरा ले ।





कुछ ऐसी ही इक रात थी जब वह गीदड़ मिला था उसे
अदब से कहा था, 'चचा जान, आदाब !'
बस इतने में ही दोस्ती हो गयी थी ।
बड़ा ख़ुश हुआ था गधा, इक भतीजा मिला है उसे ।
भतीजे ने ही तो दिखायी थी खीरों की खेती उसे ।
तभी से यह दस्तूर-सा बन गया था—
वह हर रोज़ मिलते
वह हर रोज़ खीरों के खेतों में घुस के
बहुत सैर करके निकलते वहाँ से
भतीजा भी ख़ुश था, चचा जान भी ख़ुश ।
हुआ यूँ मगर पूरनमासी की रात
चमकती हुई चाँदनी खिल रही थी
हरी भी, भरी भी, वह खीरों की खेती—
गधा मौज में आ के कुछ गुनगुनाने लगा—

भतीजे ने रोका :

'चचा जान, इस वक़्त गाना मुनासिब नहीं है,
किसाँ जाग जायेगा, देखेगा तो ख़ूब होगी पिटायी।'

गला साफ़ करके चचा जान बोले :

'तुम्हें क्या पता गीत-संगीत क्या है,
सुनेंगे तो उड़ जायेंगे होश उनके
किसानों की सुध-बुध ही जाती रहेगी
कि सातों सुरों के सहारे तो सारा जहाँ चल रहा है !

भला, कौन-सा राग तुमको आता पसंद ?'

बड़े लजलजाते हुए फिर भतीजे ने दरख़्वास्त की :

'मगर आज आवाज़ बैठी हुई लग रही है ज़रा...
ज़ुकामी-तबीयत है कुछ आपकी
किसी और दिन, रहने दीजे, यह हसरत मिटा लीजियेगा।'





चचा जान कुछ ताव में आ गये :
'यह छिटकी हुई चाँदनी उस पे खीरों की खेती,..
अगर अब न गाया तो कब गायेंगे हम ?'

यह कह के चचा जान ने आँखें मूँदीं,
इक अन्दाज़ से आस्माँ की तरफ अपनी गर्दन उठाई
लगे रेंकने—

जो गीदड़ था वह पहले खिसका वहाँ से।

किसानों के कानों में आवाज़ पहुँची—और होश उड़ गये

'अरे घेरियो उस गधे कू—
ओ रमुआ, तनिक हमरी लाठी उठैयो
पकड़, ससुरा हर रोज़ खा जाता है खीरे।'

किसानों ने तो मिल कें भगदड़ मचा दी
बहुत मारा पीटा, भगाया वहाँ से।

गधा आज भी पर वही सोचता है :

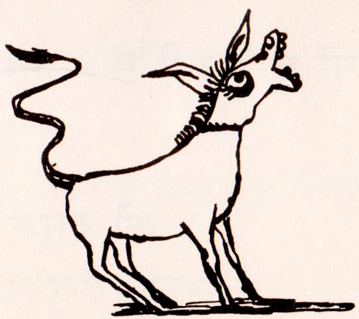
'किसानों को संगीत की सुध नहीं है।'

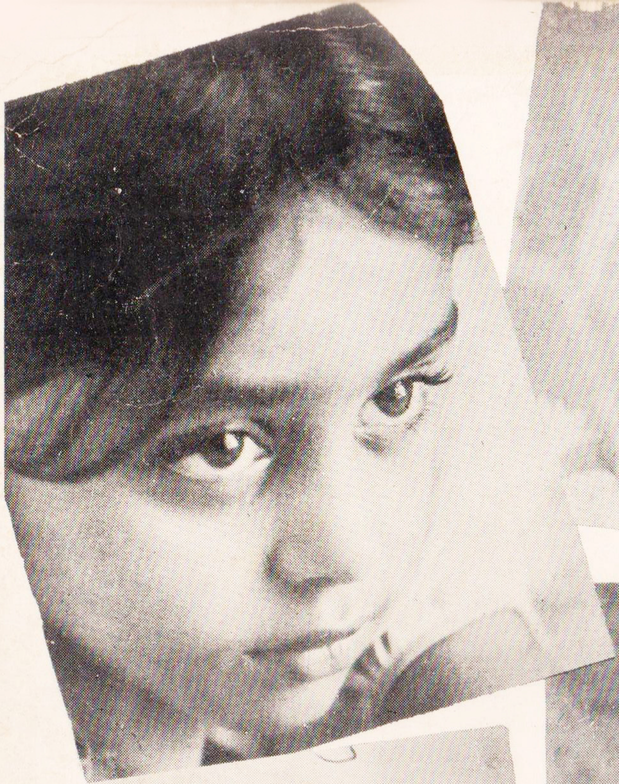
है गीदड़ की राय ज़रा मुख़्तलिफ़—

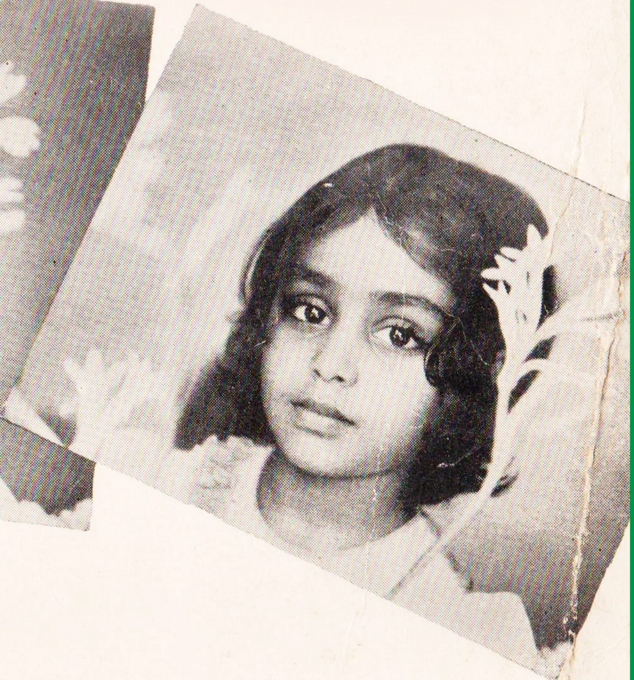
'गधा, उफ़ बड़ा ही गधा है
कहा था कि खीरे के खेतों में घुसना तो गाना नहीं।'

मगर चाँदनी रात में दिल मचलने लगे तो बिचारा

गधा क्या करे ?









बोसकी